संपादकीय

रिपोर्ताज : जेल कितना जेल है

हम में से कोई भी प्राचीन जेलों में नहीं रहा होगा, जो कह सके कि जेल पहले वैसा था, अब ऐसा है; हालाँकि इसका पक्का दावा करना ठीक नहीं, क्योंकि श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता में अर्जुन से कहा है कि मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं। उन सबको को तू नहीं जानता, किंतु मैं जानता हूँ -'बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन। तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप।।' भले ही कितने ही जन्म हो चुके हों, किंतु वास्तविकता यह है कि इस समय लोगों को अपना पहले का कुछ ज्ञात नहीं है। खैर! मेसोपोटामिया और मिस्र की पुरातन सभ्यताओं में जेल के व्यवस्थित अस्तित्व होने का इतिहास मिलता है। भारत में तो सनातन अवतारों की शृंखला में द्वापर युग के लोकरंजक भगवान श्रीकृष्ण का अवतरण मथुरा के बंदीगृह में ही हुआ था, जहाँ उनकी माँ देवकी, पिता वसुदेव के साथ नाना उग्रसेन भी बंदी थे। श्रीकृष्ण-जन्म का वह अनुमानित स्थान आज भी सर्वाधिक लोकप्रिय तीर्थस्थल व पर्यटक स्थल है। उससे पहले त्रेता युग में रावण द्वारा नवों ग्रहों के साथ यम, कुबेर आदि को कारागृह में रखने का प्रसंग रामायण में मिलता है। अस्तु, राजतंत्र हो या लोकतंत्र, उचित-अनुचित तरीके से स्वतंत्रता, बुद्धि, शक्ति को रोकने-खत्म करने के लिए व्यक्ति को कैद किया जाता रहा है। पहले राजा की इच्छा से यह तय होता था, अब न्याायपालिका के माध्यम से यह सब होता है, जिसमें सरकार व प्रशासन का भी अहम रोल रहता है। 'कानून अपना काम करता है' वाली उक्ति शासन-प्रशासन की इच्छा-अनिच्छा, आग्रह-दुराग्रह से आच्छादित रहकर ही कार्यान्वित हो पाता है। खुद कानून निर्जीव है, जड़ है, इसलिए अपना काम काम नहीं सकता।

फिलहाल, जेल जीवन की स्थिति तक सीमित रहा जाए। जेल प्रशासन की स्क्रीनिंग के बाद ही लिखित सामग्री भीतर से बाहर, बाहर से भीतर आ-जा पाती है। अनेक नेताओं, लेखकों-विचारकों ने जेल में रहते हुए बहुत कुछ लिखा है। रात्रि में और तड़के सुबह कोयल की सुरीली कूक एकदम नजदीक से सुनना बेहद सुखद लगता है। बाहर शायद ही कभी कोयल की ऐसी मधुरीली आवाज सुनाई दी हो। ऐसे में माखनलाल चतुर्वेदी की कविता 'कैदी और कोकिला' के बहुत सारे प्रसंग काल्पनिक न लगकर वास्तविक होने का एहसास कराते हैं -'क्यों हूक पड़ी?/वेदना बोझ वाली सी;/कोकिल बोलो तो!/'क्या लुटा?/मृदुल वैभव की रखवाली सी;/कोकिल बोलो तो!' और 'क्या हुई बावली?/अर्ध रात्रि को चीखी,/कोकिल बोलो तो!/किस दावानल की/ज्वालाएँ हैं दीखीं?/कोकिल बोलो तो!' तब जेल में चोरों, उचक्कों, पॉकेटमारों के साथ स्वतंत्रता सेनानी भी रहते थे। अब यह नई-नई किस्म के अपराधियों-आरोपियों के कैद रहने का ठौर है, जहाँ पेशेवर अपराधी 10-15 प्रतिशत ही हैं, बाकी अचानक या एकाध अपराध किए या उसमें गलत फँसे लोग हैं। दर्जन भर पूर्व व वर्तमान मुखिया, प्रमुख, सेना के लोग, शिक्षक, पुलिसकर्मी, वकील, डॉक्टर, नेता आदि को देखकर बाकी कैदियों का ढाढ़स बँधता है। बुरी तरह घायल, बीमार, विकलांग, विक्षिप्त हुए कैदी भी रहते हैं, कुछ तो वहीं आकर विक्षिप्त हुए हैं। कुछएक दूसरों को पागल बनाने लिए प्रयत्नशील रहते हैं। टाउन थाना के दारोगा से लेकर सीओ, नाजिर तक कैद करके लाए गए। यद्यपि वे अपने रसूख का इस्तेमाल करके हॉस्पिटल वार्ड या सदर अस्पताल का रुख करने में सफल रहे। उनकी जान को वहाँ खतरा ज्यादा रहता है। विभिन्न पार्टियों के प्रखंड व जिला स्तर के पदाधिकारी, कार्यकर्ता भी मौजूद हैं। पूर्व में उस जेल में रहे बहुचर्चित लोगों के नाम से कुछ वार्ड आज भी याद किए जाते हैं। बिहार का यह हाजीपुर जेल बना ही है 1991-92 में, लेकिन इसमें स्थानीय व प्रांत स्तर की कई नामीगिरामी हस्तियाँ रही हैं, जिनमें बिहार भाजपा के वर्तमान अध्यक्ष व सांसद नित्यानंद राय, सांसद रामा किशोर सिंह, पूर्व विधायक मुन्ना शुक्ला, कुंदन सिंह आदि प्रमुख हैं। इनमें से कुछ तो जेल के सेल में भी रहे। भाजपा के राष्ट्रीय अध्यक्ष अमित शाह तो खैर दूसरी जेल में रहे। तीन-चार कैदियों का घर जेल की चहारदीवारी के भीतर से दिखाई देता है, उनके बाप-दादों द्वारा दी गई जमीन में ही जेल बना है, जिसके एवज में उन्हें मुआवजा भी मिला था। अधिक मुआवजे के तौर पर नौकरी न सही, जेल तो मिला! उन्हें जेल की दुनिया और बाहर की बाकी दुनिया के बीच की दूरी औरों से कहीं ज्यादा खलती होगी। वे भी जेल आने से पहले उसकी आंतरिक दुनिया से अनभिज्ञ थे। यही विशिष्टता जेल को जेल बनाती है। जो श्रमिक बड़ी-बड़ी बिल्डिंगें बनाते हैं, वे खुद झोपड़ियों में रहने को मजबूर होते हैं। यह समाजवादी विचार टूटते हुए दिखा; कुछ मजदूर जिन्होंने जेल बनने के दिनों में 'कमाया' था, उन्हें किन्हीं कारणों से कैद होकर जेल आना पड़ा।

आंदोलनकारियों से लेकर माओवादी नेता-कार्यकर्ता तक कैद हैं, जिनमें से कुछ को नक्सली कहा जाता है। नक्सलियों का नाम आम लोगों में भय, खौफ, त्रास पैदा करने के लिए काफी है, लेकिन जेल में उनका बात-व्यवहार असामान्य नहीं

था। उनकी शिकायत भी यही है कि सरकार या प्रशासन ज्यादती करने के लिए किसी पर भी नक्सली का चस्पाँ लगा देते हैं। उन पर चल रहे किसी भी केस का साक्ष्य नहीं मिलता। संभव है कि साक्ष्य न मिलने के पीछे उनका भय-आतंक भी एक कारण हो, हालाँकि वे इस बात को नकारते हैं कि 'जो पुलिस धमकाते हुए कहती है कि तुमसे बड़ा गुंडा हम पुलिस वाले हैं, क्या वह हमारे खिलाफ दो-चार गवाह खड़ा नहीं कर सकती।' उनकी टीस है कि भारत में लोकतंत्र नहीं है; लूटतंत्र, भ्रष्टतंत्र, पूजीतंत्र है। प्रत्युत्तर था कि लूटने वाले जैसे लोकतांत्रिक आवरणों के भीतर रहकर अपना काम करते हैं, वैसे ही आप सब भी अपना सारा काम कीजिए, लेकिन लोकतांत्रिक परिधि के भीतर ही। समाज में बहुत-सारे लोग व संगठन परिवर्तन की आकांक्षा रखते हैं, लेकिन अलग-अलग रहने के कारण एकमुश्त परिवर्तन परवान नहीं चढ़ पाता। उदाहरण के तौर पर अन्ना हजारे के लोकपाल आंदोलन को अरविन्द केजरीवाल ने दिल्ली में अपने पक्ष में भुनाया, तो केन्द्र में भाजपा के पक्ष में वह कुछ हद तक गया। पुराने लोग अन्ना आंदोलन के समय रामलीला मैदान में उमड़ी भीड़ को जेपी आंदोलन के समय जुटी भीड़ से बड़ी बताते हैं। इसी प्रकार कुछ दिन पहले एनडीटीवी पर छापे के विरोध में प्रेस क्लब पर पत्रकार इकट्ठे हुए, जहाँ 'इंडियन एक्सप्रेस' के पूर्व संपादक एवं वाजपेयी सरकार में कबीना मंत्री रहे अरुण शौरी ने अपने भाषण में कहा कि 'इनसे पहले जो गद्दी नशीं था/उसे भी अपने खुदा होने का इतना ही यकीं था।' जिस प्रकार वो चले गए, ये भी चले जाएँगे। आखिर अरुण शौरी की दीर्घकालिक वैचारिक प्रतिबद्धताओं से कौन अवगत नहीं होगा। उन्हें उन नेताओं में शुमार नहीं किया जा सकता, जो स्वार्थ सिद्ध न होने पर अपनी वैचारिक निष्ठा मिनटों में बदल लेते हैं। पुराने आंदोलनकारी व जनता दल यू के सुलझे कार्यकर्ता की उपस्थिति में जिस दिन यह बातचीत हुई, इत्तफाक से उसके दूसरे दिन कोर्ट से आने के बाद पता चला कि दो माओवादी नेताओं को बेऊर जेल स्थानांतरित कर दिया गया है और अन्य को मुजफ्फरपुर जेल भेजने की तैयारी हो रही है।

मार्क्सवादी-लेनिनवादी साहित्य के प्रति माओवादियों की वैचारिक प्रतिबद्धता जगजाहिर है। उनकी नजर में मार्क्सवाद सब कुछ है, उससे दृष्टि ठीक होती है; जबकि हमारे लिए सब कुछ तो नहीं, पर उसकी आंशिक अहमियत से इनकार नहीं किया जा सकता। मार्क्सवाद, लेलिनवाद व हीगेलवाद पर उनके स्वहस्तलिखित लेखों में बौद्धिकता थी, पर आपत्तिजनक कुछ नहीं था। उनके मत में माओवाद मूलतः हिंसक नहीं है, पर विकास विरोधी शक्तियों व दोगली प्रवृत्तियों के खात्मा में संकोच नहीं होना चाहिए। आदमी अपने वर्गीय सोच से कहीं न कहीं अंत तक बँधा रहता है, उसी के अनुसार सोचता, समझता और विचाराभिव्यक्ति करता है। माओवादियों के सभी गुटों का अपना-अपना दृष्टिकोण है। उन सबके धुर विरोधी लोग भी जेल में हैं, जिनसे भी सीधा संवाद हुआ। हमने पहले ही बेलाग-लपेट के अपनी पृष्ठभूमि, वैचारिक रूझानों व कार्यकलापों से अवगत करा दिया था। क्यों जेल आए - यह तो जेल पहुँचने पर पहली मुलाकात में ही बताना पड़ता है।

2012 ई. में कश्मीर में सेना के अधिकारियों और जवानों के बीच हुई जबर्दस्त गोलीबारी में एकतरफा सैनिकों को सजा हुई, जिनमें से कुछएक जवान जेल में अभी कैद हैं। उस दिन की घटना के बाद भी देश के कई हिस्सों में इस तरह की कई वारदातें हुईं। तब से अधिकारियों का रवैया कुछ बदला है, नहीं तो बात-बात में गाली-गलौज, मारपीट और कई बार जवान कहाँ चला गया, उसका कोई सूराख नहीं मिल पाता था। ऐसी ही घटना को लेकर बवाल हुआ था। अधिकारियों की अनुशंसा पर ही कार्रवाई सुनिश्चित होती है, कोर्ट भी लगभग उन्हीं की सुनता है। सरकार भी उन्हीं की भेजी रिपार्ट देखती है, निचले स्तर के सैनिकों से उसका कोई सीधा संवाद नहीं है। कभी-कभार कोई मंत्री जाकर सांकेतिक फोटोशूट जरूर कर लेता है। बंदी सैनिकों का मानना है कि सरकार को ऐसे मुद्दों पर गंभीरता से संवाद करके समाधान ढूँढ़ना चाहिए।

जिले भर और उसके बाहर के भिन्न-भिन्न क्षेत्रों के जाने-माने आरोपी-अपराधी जेल में रहते हैं, दूसरे प्रदेशों के भी हैं। सब कैदी एक जैसे कहाँ होते हैं, वे एक से बढ़कर एक हैं, जिन्हें संभालना टेढ़ी खीर है। जेल प्रशासन को सभी कैदियों को एक ही भाव में रखने से बचना चाहिए, जो वह कई बार नहीं कर पाता। आपस में अश्लील हरकत की खबरें और मारपीट, हल्ला-गदाल की बात आम है। कारा अधीक्षक, जेलर, लिपिक व हवलदार की देखरेख में जेल के अंदर सफाई से लेकर खाना बनाने और कार्यालयी काम तक कैदी ही निबटाते हैं। हजार-ग्यारह सौ कैदियों की अपनी दुनिया में परस्पर राग भी है और द्वेष भी, एक दूसरे की जान के दुश्मन भी हैं। छोटे जेल की भी परिधि एक किलोमीटर से कम नहीं होती और समय से उसमें घूमने-फिरने की सुविधा भी है, परंतु आजीवन सजा काट रहे कैदियों को छोड़कर बाकी सबके लिए जेल की मुख्य चहारदावारी के पास घूमने की मनाही है। तुलसी, फूल-पत्ती से लेकर आम, अमरूद, लीची, जामुन, केला, पपीता तक है। मंदिर भी है और मस्जिद भी। किसी भी काम के लिए कैदी को माइक से ही बुलाया जाता है। जेल में

प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्र है, जहाँ डाक्टर हमेशा तो नहीं होते, पर सुबह 10-11 बजे से लेकर 4-5 बजे तक के बीच आते हैं। बाकी समय आपातस्थिति में दवा वगैरह मिल सकती है, लेकिन इसे नियमित व दुरुस्त करने की बहुत जरूरत है।

क्षमता से अधिक कैदी विश्व भर की जेलों की भयंकर समस्या है, ठीक वैसे ही वहाँ सिपाहियों की कमी भी एक समस्या है। इसलिए उन्हें ज्यादा घंटे काम करना पड़ता है, तिस पर भी उनके लिए जेल के भीतर न खाने की व्यवस्था है और न ही चाय-जलपान की। जेल के अंदर उन्हें इसके लिए कैदियों पर निर्भर रहना पड़ता है, शीघ्र ही कैंटीन बनने की बात चल रही है। तब रोजमर्रा की चीजों की समस्या कुछ हद तक दूर होगी। जिनके मुलाकात करने वाले नहीं हैं, कम हैं, दूर हैं या किन्हीं कारणों से नहीं आ पाते, उनके लिए यह ठीक होगा, किंतु पैसे की जरूरत वहाँ भी बनी रहेगी।

जेल महानिरीक्षक, डीएम, एसपी आदि द्वारा समय-समय पर छापेमारी की जाती है; मंत्री, सचिव, मानवाधिकार आयोग आदि का दौरा भी होता है। जेल में नशीला पदार्थ जैसे दारू-शराब, गाँजा, सिगरेट, मोबाइल व अधिक रुपए रखना मना है। जाँच के बाद ही बाहरी दवाइयों के सेवन की सुविधा है। वैसा कोई भी सामान जिसे रूपान्तरित कर छोटे-बड़े हथियाार के तौर पर इस्तेमाल संभव है, वर्जित है। लेकिन हर बार छापे में कुछ न कुछ आपत्तिजनक मिलता अवश्य है। लेकिन जितना मिलता है, उससे दस-बीस-पचास गुणा ज्यादा प्रयुक्ति में रहता है। टेलीफोन सुविधा का उद्घाटन राज्य के मुख्य सचिव ने किया था, किंतु उसे बंद करना पड़ा। फोन करने की प्रक्रिया बहुत जटिल थी। शुल्क देकर कुल तीन जगह ही फोन किया जा सकता था और वह भी सप्ताह में केवल एक जगह एक बार। तीनों नंबर पहले प्रशासन सत्यापित कराता था। जेल के अंदर की स्थिति से तत्क्षण बाहर के लोगों को अवगत कराना नामुमकिन है। बिजली की व्यवस्था बाहर जैसी ही है, लेकिन चौबीसों घंटे रहनी चाहिए। अलग महिला वार्ड है। लेकिन महिला कैदी और पुरुष कैदी कभी एक दूसरे को जेल के अंदर नहीं देख पाते, ऐसी बनावट-व्यवस्था है। जिस घर परिवार के महिला और पुरुष दोनों कैद हैं, उन्हें सप्ताह में एक बार मिलने की सुविधा है। नाबालिगों लिए अलग वार्ड भर है, बाकी कुछ भी अलग नहीं। हर वार्ड में 30-40 कैदी रहते हैं, उसमें से किसी समझदार सीनियर को वार्ड इंचार्ज बनाया जाता है। संक्रमण, एलर्जी की समस्या स्वाभाविक है। कंबल, रसोई-मेस, शौचालय की नियमित सफाई जरूरी है। समाचार सुनने के लिए टेलीविजन नहीं है। अखबार भी नियमित नहीं आता, प्रशासन गाहे-बेगाहे रोक लेता है। एक बहुत छोटी लाइब्रेरी जरूर है। सुबह वार्डों को जल्दी खोलना और शाम को देर से बंद करना बदलते समय की माँग है। सुबह वार्ड खुलते समय, दोपहर और शाम को बंदी के समय गिनती होती है। जब तक गिनती ठीक नहीं मिलती, तब तक मिलाने की कवायद चलती रहती है।

जो लोग किसी कार्य-विशेष में मशगूल होने के कारण लगातार कई-कई दिन घर-डेरे से सौ-पचास कदम की दूरी भी तय न करते हों और एक-एक दो-दो दिन फोन पर बिलकुल न बात करते हों, उनके लिए जेल की दुनिया छोटी नहीं है। हाँ, यह स्वैच्छिक नहीं, बाध्यकारी दुनिया है। जिसे कोई गलत आदत नहीं, कोई नशा नहीं, नियमित दिनचर्या है, उसे जेल के हिसाब से ढालना मुश्किल नहीं है। लेकिन कोर्ट में पेशी के समय हथकड़ी लगाना जरूर विचित्र लगता है। आखिर इसकी जरूरत क्या है? लालू प्रसाद, आशाराम बापू, राम रहीम सिंह, छगन भुजबल, कार्तिक चिदंबरम जैसे जितने लोगों को कोर्ट में पेश होते टेलीविजन पर दिखाया जाता है, किसी को तो हथकड़ी नहीं लगती। ठीक है कि लोकतंत्र में भी वे बड़े लोग हैं, भाग नहीं सकते; लेकिन सांसद विजय माल्या, उद्योगपति नीरव मोदी, धर्मगुरु जाकिर नाईक आखिर भागे ही हैं, सब आदमी के पास भागने का संसाधन कहाँ है? जेल में शाकाहारी लोगों को ज्यादा दिक्कत है, क्योंकि बर्तन से लेकर मेस-रसोई तक में मांसाहारी भोजन साथ-साथ बनता है। यदि चौकस न रहा जाए तो एक का करछुल दूसरे में डुबो देना साधारण बात है और फिर कौन हमेशा रखवाली करेगा। मुस्लिम लोग रोजा में मांसाहार सहित सब कुछ खाते हैं और वह भी शाम से देर रात तक और फिर सुबह सहरी। इस प्रकार रोजा में कम नहीं, खूब असंयत आहार खाते हैं। पुलिसकर्मी जेल को नरक कहकर जल्दी निकलने की नसीहत देते हैं, यदि बार-बार तबीयत खराब होने लगे तो ऐसा एहसास लाजिमी है। दूसरी ओर, सुलझे कैदियों के साथ पुलिसकर्मी इसे सबसे बड़ा विश्वविद्यालय भी बताते है; जो जेल नहीं गया, उसका जीवन अधूरा मानते है। जेल कोई स्वेच्छा से नहीं जाता, हालाँकि वहाँ मजे से रहने वाले लोग भी हैं, जिन पर आरोपी-अपराधी होने का ठप्पा लग चुका है। लेकिन उनसे ज्यादा शातिर लोग बड़ी संख्या में बाहर रहते हुए अपने दुष्कृत्य को अंजाम दे रहे हैं। इसलिए जेल के भीतर कैदियों का बात-व्यवहार बाहर के लोगों से बेहतर लगे तो आश्चर्यचकित नहीं होना चाहिए। एक सवाल अनुत्तरित है कि जेल में रहते हुए आदमी चुनाव तो लड़ लेता है, पर मतदान नहीं कर सकता - आखिर क्यों?